नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन या सत्ता संघर्ष

भारत में नक्सलवाद लगातार बढ़ रहा है। नेपाल के सत्ता परिवर्तन से उनका मनोबल भारत में भी मजबूत हुआ है। नेपाल से लेकर आंध्र को जोड़ने में अब छत्तीसगढ़ का कुछ क्षेत्र ही बचा हुआ है। अन्यथा अन्य सभी प्रदेशों को तो वे आसानी से पार कर चुके हैं। छत्तीसगढ़ में भी दोनों ओर से निरन्तर और निर्वाध रूप से उनकी प्रगति जारी है। सम्पूर्ण भारत में पहली बार छत्तीसगढ़ सरकार ने नक्सलवाद को बस्तर जिले में रोकने को चुनौती के रूप में लिया है। नक्सलवादियों ने भी अपनी सारी ताकत बस्तर क्षेत्र में लगा दी है। दोनो ओर से ही नियम कानून और मानवता को खूँटी पर टांगकर मुकाबला किया जा रहा है। अभी अभी अमेरिकी दूतावास ने भी बस्तर क्षेत्र में बढ़ते नक्सलवाद पर नियंत्रण के लिये छत्तीसगढ में भारत सरकार को सहायता की इच्छा व्यक्त की है। उसकी इस इच्छा का छत्तीसगढ़ सरकार ने स्वागत किया और भारत के साम्यवादियों ने विरोध। बस्तर जिले का नक्सलवाद कितना महत्वपूर्ण हो गया है कि एक विदेशी शक्ति ''अमेरिका'' को उस आतंकवाद के विरूद्ध सहायता की पेशकश करनी पड़ी। दूसरी ओर दूसरे विदेशी गुट के भारतीय एजेन्टों को भी अमेरिका के विरूद्ध आवाज उठानी पड़ी। अमेरिका को कश्मीरी आतंकवाद की अपेक्षा बस्तर अधिक समस्या ग्रस्त दिखा और साम्यवादियों की तो चर्चा ही करना व्यर्थ है। वे तो रात में गंभीर निद्रा में भी अमेरिका के विरूद्ध बड़बड़ाते रहने के लिये ख्याति प्राप्त हैं चाहे संदर्भ रहे या न रहे।

भारत की सम्पूर्ण संवैधानिक व्यवस्था शरीफों, गरीबों श्रम जीवियों तथा सामान्य नागरिकों के शोषण के उद्देश्य से अपराधियों, पूँजीपतियों, बुद्धिजीवियों तथा राजनेताओं का मिला जुला षडयंत्र है। ऐसी व्यवस्था का एक दिन भी चलते रहना या तो हमारी मजबूरी का प्रतीक है या कायरता का। पांच प्रकार के अपराध और छः प्रकार की समस्याएँ लगातार बढ़ती जा रही है। भ्रष्टाचार भी चरमोत्कर्ष पर है। पूरे भारत की लगभग आधी आबादी प्रथम वर्ग अथात् श्रमजीवी गरीब ग्रामीण किसानों की है। यह बात सर्वविदित है। किन्तु बुद्धिजीवी दो गुटों में बंटकर इनके शोषण के नये–नये तरीके खोजते रहते हैं। सभी जानते हैं कि आरक्षण के समर्थन या विरोध से श्रमजीवियों को दूर दूर तक कोई लाभ नहीं है। सभी जानते हैं कि मेघा पाटकर के आंदोलन के समर्थन या विरोध से भी यह प्रथम वर्ग मजबूत नहीं होने वाला। क्योंकि नर्मदा बांध बनने से प्रथम वर्ग के ही कुछ लोगों को लाभ और कुछ हानि होने वाली है। दूसरे वर्ग के ही कुछ लोग पूँजीपतियों से धन लेकर स्वदेशी शीतल पेय, स्वदेशी साबुन, स्वेदशी भाषा और स्वदेशी के नाम पर अनावश्यक आंदोलन खड़े करते रहते हैं जबकि भारत का बच्चा बच्चा समझता है कि आज भारत को स्वदेशी समाज व्यवस्था की सबसे अधिक जरूरत है जिसमें राजनैतिक शासन व्यवस्था का न्यूनतम हस्तक्षेप हो। सम्पूर्ण भारत का आम नागरिक गुलाम मालिक की भूमिका में जीने के लिये मजबूर है जो निर्णय की स्वतंत्रता के मामले में पांच वर्षों तक गुलामी का जीवन जीने के बाद भी एक दिन वोट देने के अधिकार को ही अपने मालिक होने का दंभ समझ लेता है। साम्यवादी, समाजवादी, पूँजीवादी आदि विभिन्न नामा से गुट बना बनाकर ये सब लोग किसी न किसी रूप में प्रथम वर्ग के शोषण और द्वितीय वर्ग के पोषण में ही संलग्न रहते हैं।

सम्पूर्ण समाज में से यदि पेशेवर शोषकों को निकाल दें तो सम्पूर्ण समाज लगभग अन्ठानवे प्रतिशत होते हुए भी कि कर्तव्य विमूढ है। दो पतिशत पेशेवर शोषकों और उनके एजेन्टों के आकर्षक नारों के बीच फंसकर वह बेचारा कई बार हाथ पांव मारता भी है किन्तु हर बार उसे या तो असफलता हाथ लगती है या सामाजिक विघटन। खूब मेहनत करके भी वह परिणाम की आर नजर दौड़ाता है तो अपने अन्ठानवे प्रतिशत स्वरूप को दो भागों में बंटकर एक दूसरे के विरूद्ध ही संघर्ष संलग्न पाता है और तब बेचारा आंदोलनो से दूर भजन पूजन क्रिकेट, जुआ आदि से मन बहलाता है। आज भारत की संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था ने इतनी मजबूत पकड़ ली है कि समाज बेचारा छटपटाने स भी महरूम हो गया है, संघर्ष तो वह क्या करेगा। ऐसी विकट गुलामी की व्यवस्था के विरूद्ध नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन के नाम से मैदान में आया तो किसानों, गरीबों, श्रमजीवियों और ग्रामीणों का उस ओर आकर्षण स्वाभाविक ही था। जो नक्सलवादियों को मिला भी। भारत की सम्पूर्ण संवैधानिक व्यवस्था को इसी तरह चलने देना हमारी कायरता का प्रतीक ही है। इस व्यवस्था को तो बदलना ही होगा। यह व्यवस्था इस तरह चलने नहीं दी जा सकती। इसलिये व्यवस्था परिवर्तन हमारा एसा लक्ष्य है जिसका समर्थन हमें करना ही चाहिये।

मैं बचपन से ही अहिंसक विचारों का रहा हूँ। मैने अहिंसा को मानने के साथ साथ जिया भी है किन्तु मैं अहिंसा और कायरता का फर्क भी जानता हूँ जो समान्यतया अहिंसा के पक्षधर शायद बिल्कुल नहीं जानते। मेरे विचार में व्यवस्था परिवर्तन हमारा लक्ष्य है और अहिंसा मार्ग। अहिंसक तरोके से व्यवस्था परिवर्तन श्रेष्ठतम मार्ग है और हम हिंसक तरीके से व्यवस्था परिवर्तन का भरपूर विरोध करते हैं किन्तु यदि वर्तमान व्यवस्था और हिंसक परिवर्तन के बीच एक का चुनाव करना हो तो हम या कम से कम मैं तो वर्तमान व्यवस्था की अपेक्षा हिंसक परिवर्तन को ही ठीक समझूंगा।यही कारण है कि मैने दस वर्ष पूर्व नक्सलवाद पर लेख लिखते समय उनकी तुलना स्वतंत्रता संघर्ष के क्रान्तिकारी भगतसिंह और सुभाष चन्द्र बोस तक से कर दी थी।

अब मैंने नक्सलवाद पर फिर से विचार किया तो मुझे नक्सलवाद में व्यवस्था परिवर्तन के स्थान पर सत्ता परिवर्तन के ही सारे लक्षण दिखने लगे। मेरे सामने एक प्रश्न खड़ा हुआ कि व्यवस्था परिवर्तन की दिशा तानाशाही की दिशा में हो तब तो समाज और कमजोर होगा तथा आज की अपेक्षा अधिक गुलाम होगा। बहुत प्रयत्न के बाद भी मैं नक्सलवादियों के भावी संवैधानिक स्वरूप के विषय में नही जान सका।

काफी चर्चा के बाद भी वे नहीं बता सके कि उनके शासन में संसद कस्टोडियन होगी कि मैनेजर। समाज को वर्तमान की अपेक्षा कौन कौन से अधिक अधिकार होंगे इसका भी कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिला। उनका तो सिर्फ एक ही उत्तर ह कि जब व्यवस्था बदलेगी तब सुशासन का जायगा। सुशासन या तो तानाशाही से आ सकता है या स्वशासन से। मुझे चिन्ता हुई कि तानाशाही के माध्यम से सुशासन और वर्तमान अव्यवस्था के बीच यदि एक को चुनना हो तो हम किसे चुनें ? मैं तो इसी नतीजे पर पहुँचा कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन नहीं है। नक्सलवाद पूरी तरह हिंसक सत्ता संघर्ष है जो वर्तमान व्यवस्था की कमजोरियों और खराब नीयत का लाभ उठाकर तथा शोषण के विरोध को आधार बनाकर सत्ता परिवर्तन के लिये संघर्षरत है।

मुझे स्पष्ट दिखता है कि यदि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन होता तो वह नई व्यवस्था का संवैधानिक स्वरूप अवश्य ही समाज के समक्ष रखता। यदि नक्सलवाद सत्ता परिवर्तन मात्र है तो सत्ता परिवर्तन के अहिंसक प्रयत्नों की अपेक्षा हिंसक प्रयत्नों को अधिक समर्थन कैसे किया जाय ? मैं मानता हूँ कि तानाशाही में लोकतंत्र की अपेक्षा सुशासन की ज्यादा संभावनाएँ होती हैं। नक्सलवाद जब और जहाँ भी आयेगा वहाँ अव्यवस्था तो कम होगी ही किन्तु अव्यवस्था को कम या समाप्त करने के लिये तानाशाही शासन व्यवस्था का समर्थन उचित नहीं। नक्सलवाद हिंसक मार्ग है या अहिंसक यह मेरे निष्कर्ष का आधार नहीं। मेरे निष्कर्ष का आधार तो यह है कि नक्सलवाद एक ऐसी अंधेरी गली तो नही जिसमें से लोक स्वराज्य की और लौटना संभव ही न हो।मुझे तो कुछ ऐसा ही दिखता है। वर्तमान अव्यवस्था

और शोषण से मुक्ति कठिन तो दिखती है परन्तु असंभव नहीं। किन्तु नक्सलवादी तानाशाही से मुक्ति की कल्पना ही स्वप्न मात्र होती है। इसलिये ही मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि नक्सलवाद वर्तमान अव्यवस्था का समाधान न होकर स्वयं में एक समस्या है।

मैं वर्तमान व्यवस्था को कलंक मानता हूँ। इस व्यवस्था को बदलना ही चाहिये। साथ ही यह भी आवश्यक है कि इस व्यवस्था को लोक स्वराज्य की दिशा में ही बदलना चाहिये, केन्द्रीयकरण की दिशा में नहीं। हम लोग इस विकेन्द्रीयकरण की दिशा में व्यवस्था परिवर्तन के एक प्रयास की ओर अहिंसक तरीके से आगे बढ़ रहे हैं। यदि कोई हिंसक तरीके से भी इस दिशा में बढ तो मैं वर्तमान अव्यवस्था के स्थान पर उस व्यवस्था परिवर्तन के कार्य का सीमित समर्थन करूँगा। यदि नक्सलवाद स्वयं को सत्ता परिवर्तन से हटाकर व्यवस्था परिवर्तन मे शामिल करना चाहे तो हम उसका स्वागत करेंगे किन्तु आवश्यक है कि उसकी नीतियाँ सत्ता की अपेक्षा समाज को मजबूत करने की ओर झुकी हों और वह आंदोलन के पूर्व ही अपनी नीतियों का संविधान घोषित करे। यदि नक्सलवाद अपनी नीतियों को स्पष्ट करके यह सिद्ध कर दे कि उसका उद्देश्य व्यवस्था परिवर्तन है तो व्यवस्था परिवर्तन अभियान और नक्सलवाद के बीच सिर्फ मार्ग का फर्क होगा, लक्ष्य का नहीं। किन्तु यदि नक्सलवाद का लक्ष्य सत्ता परिवर्तन है, जैसा कि अब दिख रहा है तो व्यवस्था परिवर्तन अभियान से नक्सलवाद का लक्ष्य भी भिन्न होगा और मार्ग भी।

लेख आरक्षण की आग

राजनीतिज्ञ अत्यन्त चालाक होता है। उसके समक्ष मानवता, न्याय, सामाजिकता आदि का कोइ अर्थ नहीं। उसका तो येन केन प्रकारेण कुर्सी पाना ही एकमात्र लक्ष्य होता है। अर्जुन सिंह जी एक मंजे हुए राजनैतिक खिलाड़ी के लिये विख्यात है। उनकी राजनैतिक चतुराई की मात्रा चालाकी से भी ऊपर मानी जाती है। मनमोहन सिंह राजनीतिज्ञ नहीं है। ऐसे चालाकी शून्य गैर राजनीतिज्ञ को प्रधान मंत्री की कुर्सी पर बैठना और सफल संचालन अर्जुन सिंह जी के लिये असह्य होना स्वाभाविक ही था। समाज को दो वर्गो में बांटकर एक के पक्ष में खड़ा होना उनके लिये अर्जुन बाण के समान उपयोगी था। अर्जुन सिंह जी ने अपना अर्जुन बाण छोड़ दिया। समाज दो वर्गों में बंटकर जलने लगा जिसकी लपटें मनमोहन सिंह जी को भी झुलसा रही है।

आरक्षण स्वयं में एक समस्या है। समाधान नहीं। हजारों वर्षों से सवर्णो ने योग्यता को दरकिनार करके जन्म के आधार पर जातियों को सामाजिक स्वीकृति प्रदान कर दी और जाति के आधार पर सुविधा के सभी स्थान आरक्षित करके कुछ जातियों को सुविधाविहीन अनारक्षित श्रेणी में डाल दिया। आरक्षण हमेशा अन्याय को जन्म देता ही है। सामाजिक आरक्षण के परिणाम स्वरूप सामाजिक असंतुलन स्वाभाविक था जिसने कुछ जातियों को हजारों वर्षों तक के लिए शोषण का शिकार बनाये रखां सन् सैंतालीस में इस जातीय आरक्षण को संवैधानिक रूप से समाप्त कर दिया गया किन्तु दबे कुचले लोगों के आसूँ पोछने के हिसाब से ऐसी दलित पिछड़ी जातियों को दस वर्षो के लिये आरक्षण का प्रावधान भी कर दिया गया। दस वर्षों का वही आरक्षण अब धीरे–धीरे शोषण का हथियार बन गया है। आरक्षण रूपी हथियार से अब बुद्धिजीवी लोग श्रमजीवियों का भरपूर शोषण करने में लगे हैं। आरक्षण रूपी हथियार यदा कदा राजनैतिक युद्ध में भी बहुत उपयोगी होता है जिसका उपयोग वर्तमान समय में किया गया है।

समाज में वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेष और वर्ग संघर्ष कठिन कार्य नहीं है। योजनाबद्ध प्रयास और निरंतर सक्रियता से यह काम आसानी से कर सकते हैं। मैने ''बिना बात का झगड़ा'' पर एक प्रयोग किया। मैने एक मुस्लिम धर्म प्रमुख खलील भाई से पूछा कि यदि एक मुसलमान, जो मंदिर में ही रात्रि विश्राम पर है, मंदिर में मूर्ति के समक्ष बैठकर नमाज पढ़े तो आप क्या कहेंगे। उन्होने बताया कि कुछ नहीं। क्योंकि वह मुसलमान मूर्ति के समक्ष नहीं पत्थर के पास नमाज पढ़ रहा है। दूसरे धर्म प्रमुख कलू मीयां से यही प्रश्न किया तो उन्होने इसे नापाक बताया। दस मिनट की बहस के बाद ही दोनो में गर्मागर्मी होने लगी और भीड़ लग गई। मैने शान्त कराकर एक हिन्दू प्रमुख ललु अग्रवाल से इस घटना की हिन्दू मीमांसा पूछी तो उसने कहा कि हम उसे रोककर मंदिर को साफ करायेंगे क्योंकि क्या मुसलमान हमें मस्जिद में यज्ञ करने देगें। यदि नही तो हम उन्हे कैसे ऐसा करने देंगे। मैने दूसरे हिन्दू राधेश्याम पटेल से यही प्रश्न किया तो उसने कहा कि हम ऐसे मुसलमान का स्वागत करेंगे जो हमारे भगवान के समक्ष बैठकर नमाज पढ़े। हमारा भगवान मुसलमानों के समान कमजोर नहीं। थोड़ी ही देर में उसी भीड़ में दो गुट बनकर गर्मागर्म विवाद शुरू हो गया। सारी भीड़ और सभी धर्म प्रमुख जानते थे कि नमाज पढ़ने की घटना काल्पनिक है किन्तु काल्पनिक घटना भी आसानी से विवाद बनने में सफल हो गई।

कल्पना करिये कि मंत्री जी को इस मंत्रालय से हटाकर खाद्य मंत्रालय दे दिया जाय और वे एक फर्मान जारी कर दें कि जो लोग सामान्य से अधिक मोटे हैं और अधिक भोजन करते है उनके भोजन में कटौती करके दुबले पतले लोगों को भोजन की मात्रा बढ़ाई जाय। यह परिवर्तन इसलिये न्याय संगत है कि मोटे लोगों ने पतले लोगों का हक छीनकर पचासों वर्षों में बहुत अधिक अनाज खा लिया। कपिल सिव्वल जी का तर्क होगा कि सबको भरपट भोजन देना हमारे घोषणा पत्र का एक हिस्सा है। इसलिये किसी के भोजन में कटौती करके उसे देना जो अधिक भोजन पचाने की क्षमता नहीं रखता, क्या लाभ है। अर्जुन सिंह जी का अपना तर्क है कि वह आज भले ही न पचा सके किन्तु उसकी आगे की पीढ़ी पर उसका असर पड़ेगा। इसलिये उसे मोटे लोगों से अधिक भोजन मिलना ही चाहिये। साम्यवादी कहेंगे कि मोटे लोगो के भोजन में कटौती तो हो किन्तु न्याय संगत तरीके से हो। भाजपा वाले भो कहेंगे कि हम कटौती के पक्ष में हैं किन्तु मोटे व्यक्ति का पेट खाली न रहे। आसानी से समाज में गुट बन जायगा। मैं अपने क्षेत्र में पंचायत करने के लिये प्रसिद्ध हूँ। मेरे सामने एक जटिल प्रश्न आया। दो ग्रामीणों के घरों के बीच की सरकारी जमीन पर एक महुआ का पेड़ था जिसका महुआ पिछले पंद्रह बीस वर्ष से एक परिवार चुनता था। दूसरे परिवार ने आपत्ति की कि यह परिवार पंद्रह बीस वर्ष स चुनता है, अब पंद्रह बीस वर्ष मै चुनूँगा। दोनो के अपने–अपने तर्क थे। जो पहले से चुन रहा है उसका तर्क है कि दूसरा परिवार उसके मकान बनाया है तो उसका हक नहीं है। दूसरे परिवार का तर्क है कि इसी पेड़ का महुआ बेच–बेच कर इसने मकान बना लिया। मैं पहले से चुनता तो मैं भी बना लेता। मैं बहुत विचारने के बाद भी न्याय परिभाषित नहों कर सका और मैने समझौता स्वरूप निर्णय दिया कि तीन चिट डाल दो जिसमें एक में पहला पक्ष, दूसरे में दूसरा पक्ष और तीसरे में बराबर बराबर लिखा हो। मैं महसूस करता हूँ कि मेरी जगह पर कोई नेता होता तो दोने के निर्णय को टालकर सदा के लिये झगड़ने को बाध्य कर देता।

महत्वपूर्ण पदों पर योग्यता को आधार मानने के विरोधी पक्ष के इस तर्क में सच्चाई है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी पद के पैतृत संसकार और पैतृक वातावरण मिलता है तो उस व्यक्ति में अतिरिक्त योग्यता का स्वाभाविक विकास होता हैं इसे आरक्षण के माध्यम से बाधित नहीं किया गया तो कुछ परिवारों का लम्बे समय तक योग्यता पर एकाधिकार हो जायगा जो न्याय संगत नहीं है। मैं प्रश्न कर्ताओं को अच्छी तरह समझता हूँ कि वे सब राजनीति से जुड़े है या अन्य महत्वपूर्ण पदों पर हैं। मेरा प्रति प्रश्न है कि आज कांग्रेस अध्यक्ष का पद पीढ़ियों से एक परिवार के पास रहने से ही क्या उसके वंशजों में अतिरिक्त योग्यता का दीर्घकालिक तथा स्वाभाविक विकास नहीं हो रहा ? क्या वह सही नहीं कि राहुल गांधी की योग्यता में उनके पूर्वजों के पद का महत्वपूर्ण योगदान है ? क्या योग्यता के आधार पर प्रधान मंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष बनने की प्रणाली अन्य कांग्रेस कर्मियों का शोषण नहीं ह ? क्या हम ऐसा आरक्षण कर दें कि भारत में किसी भी परिवार ''चाहे सवर्ण हो या अवर्ण'' के किसी दूसरे सदस्य को पचास वर्षों को राजनीति में पद

नहीं दिया जाना चाहिये ? यदि ऐसा हुआ तो क्या अर्जुन सिंह और लालू यादव समर्थन करेंगे ? क्या सोनिया जी तब भी चुप रहेंगी ? मैं समझता हूँ कि मनमोहन सिंह अटल जी सरीखे कुछ लोगो को छोड़कर अन्य नेताओं की पूरी भाषा ही बदल जायगी।

यदि आरक्षण समर्थकों का यह तर्क मान लें कि हजारो वर्ष पूर्व के अत्याचारों के प्रभाव से प्रभावित वर्तमान पीढ़ी को तीव्र गति से आगे बढ़ाने के लिये उनकी गति रोककर इन्हे आगे बढ़ाना आवश्यक है तो हजारों वर्ष पूर्व भारत के अनेक हिन्दू मंदिरों को मस्जिद में बदलने के परिणाम स्वरूप हुये अन्याय के कारण अब मंदिरों के साथ–साथ कुछ मस्जिदें भी मंदिरों में बदली जावें ? कौन नहीं जानता कि भारत में बडो संचया में हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया गया जिन्होने आबादी के सुतुलन पर प्रभाव डाला। इस संबंध में क्या सरकार हिन्दुओं को कोई छूट देने की व्यवस्था करेगी ?

मैं अठाइस मई को मेवाड़ इन्स्टीट्युट वसुन्धरा में ''स्वतंत्रता संघर्ष की डेढ़ सौंवी जयन्ती और मंगल पांडे का योगदान'' विषय पर बोल रहा था अनेक सांसद मंच पर थे। मैने पूछा कि क्या सवर्णों ने सिर्फ शोषण ही किया है ? क्या मंगल पांडे के परिवार द्वारा किया गया अवर्ण शोषण में से मंगल पांडे के त्याग को घटाकर परिणाम निकालना उचित नहीं होगा ? क्या पूर्व के स्वतंत्रता संग्राम में जाति के आधार पर त्याग का आकलन करने की परंपरा का खतरा हमारे समक्ष नहीं है ?
मैं जानता हूँ कि नेताओं के पास इसका कोई उत्तर नहीं है। ये लोग उत्तर खाजना भी नहीं चाहते क्योंकि न इन्हे
समाज से मतलब है न धर्म से और न जाति स। न्याय अन्याय से भी इनका दूर–दूर तक कोई वास्ता नहीं।
इनका तो सिर्फ एक ही उद्देश्य है कि किस तरह अपनी राजनैतिक हैसियत को मजबूर किया जाय और दूसरे की
कमजोर। चाहे धर्म जाति समाज का कितना भी नुकसान क्यों न हो।

मैं वर्तमान आरक्षण नीति के न समर्थन में हूँ न विरोध में। दोनो का उद्देश्य श्रम शोषण है। श्रम जीवियों की अपेक्षा बुद्धिजीवियों का वेतन, अधिकार और सुविधाएँ अधिक से अधिक बढ़ती रहे और उन बढ़ी हुई सुविधाओं के लिये आपस में टकराव हो यही तो आरक्षण की समस्या है। सारा देश जानता है कि आदिवासी हरिजन पिछडे लोगों का प्रतिशत श्रमजीवियों में अधिक है बुद्धिजीवियों में कम। यदि राजनेताओं के अधिकार कम करके समाज को दे दिये जायें तो राजनीति में आरक्षण की कोई आवश्यक्ता ही नहीं रहेगी। इसी तरह सरकारी नौकरियों का वेतन भत्ता और सुविधाएँ कम करके श्रम के मूल्य और मांग को बढ़ने दिया जाय तो वास्तव में पिछड़ों की हालत भी सुधर जायगी और आरक्षण की जरूरत भी नहीं रहेगी। किन्तु ये बुद्धिजीवी ऐसे नहीं होने देंगे क्योंकि इनका आरक्षण विवाद तो अन्याय पूर्वक प्राप्त सुविधाओं के बंटवारे का है, श्रम को जोडकर न्याय अन्याय का नहीं। मेरा सुझाव है कि यदि आरक्षण देना आवश्यक हो तो जो काम श्रम संभव है उसे मशीन से बनाने पर रोक लगाकर श्रम को आरक्षण दे दें। फिर देखिये कि यह सब झगड़ा खत्म होता है कि नहीं।

वैसे मैं किसी भी प्रकार के आरक्षण को अनावश्यक मानता हूँ। आरक्षण के बिना भी समस्याओं का न्यायपूर्ण समाधान संभव हैं मेरे विचार से आरक्षण के पक्ष विपक्ष से राजनेताओं को किनारे करके यदि विचार हो तो अधिक न्यायपूर्ण समाधान निकल सकता है। किन्तु आरक्षण एक भावनात्मक मुद्दा बनाया गया है, उसका समाधान भी उसी तरह बौद्धिक तरीके से होना चाहिये। आरक्षण को पूरी तरह न्यायिक और मानवीय दिशा देने का तातकालिक समाधान सिर्फ यही है कि पिछडी जातियों के गरीबी रेखा से नीचे घोषित परिवारों को सत्ताइस प्रतिशत आरक्षण देने का प्रावधान कर दें। वर्तमान में आरक्षण के समर्थन में आवाज उठा रहे लोग आरक्षण विरोधियों में शामिल हो जायंगे। आरक्षण के नाम पर समाज टूटने से बच जायगा। मेरे विचार में आरक्षण के जहर से मुक्ति का यह सर्वश्रेष्ठ मार्ग है।

प्रश्न (1) श्री बद्री प्रसाद मित्तल, श्योपुर, मध्यप्रदेश

मैं बहुत कम पढ़ा लिखा होने से आपको कोई वैचारिक सहायता नहीं कर पा रहा। किन्तु ज्ञान तत्व पढ़ते पढ़ते मुझे महसूस होने लगा है कि भारत की सभी समस्याओं के समाधान की दिशा में आपके प्रयास बिल्कुल ठीक हैं। मेरी हार्दिक अनुभूति है कि आप दो हजार नौ से पूर्व ही यह काम पूरा कर लेंगे यद्यपि कार्य अत्यन्त कठिन और साधन सीमित हैं।
12/1/ 114 घ प्रश्न (2) श्री हुकुम सिंह यादव, धनारी, बदायूँ, उत्तर प्रदेश

ज्ञान तत्व कभी–कभी आता है। पढ़ता हूँ तो एक अजीब सी शान्ति और उत्साह पैदा होता है। राजनैतिक व्यवस्था के कारनामें देख सुनकर तो जीने से भी निराशा होने लगती है किन्तु आपकी दो हजार नौ की घोषणा निराशा को आशा और प्रतीक्षा में बदल देती है।

मैने आपके भाषण का एक टेप खरीदा था। मैं प्रायः आम लोगों को वह टेप सुनाता रहता हूँ। उस टेप में बजरंग गैस भरी हुई है। जहाँ भो उपयोग करता हूँ तात्कालिक प्रभाव पड़ता है। आम लोग महसूस करते हैं कि लोक स्वराजय प्रणाली ही एकमात्र विकल्प है। ज्ञानतत्व एक सौ नौ में कुन्दललाल जी कुशवाहा से मैं पूरी तरह सहमत हूँ। आप भले ही अपने को मनुष्य मानते हैं किन्तु मेरी और कुन्दन जी की नजर में तो आप या तो देवता हैं या महा मानव।
उत्तर– आप सबने मुझ में कुछ विलक्षण प्रतिभा देखी इस संबंध में मुझे कुछ नहीं कहना हैं। मैं तो सिर्फ यही कह सकता हूँ कि इन्द्र रूपी राजा से मुक्ति के लिये सबको मिलकर गोवर्धन पर्वत उठाना होगा। आप सबके हाथ लगने आवश्यक हैं। आप समाज में वातावरण बनाने की दिशा में काम करते रहें।

पिछली यात्रा के समय खरीदे गये टेप का आप उपयोग कर रहे है यह अच्छी बात हैं पच्चीस जुलाई से दो अक्टूबर तक की इस वर्ष की मेरी यात्रा मे भी आप सीड़ी या साहित्य खरीद सकते हैं। आपको बहुत काम देगा।

प्रश्न (3) श्री रविन्द्र कुमार आर्य, 6 आर्य समाज मंदिर,रेलवे रोड, जींद, हरियाणा।

ज्ञान तत्व एक सौ दस में आपने नक्सलवाद पर कुछ लिखा था। मैं और विस्तृत जानता चाहता हूँ। आपने यह भी लिखा कि आपका उद्देश्य न समाज सेवा है न समाज में फैली भ्रान्ति दूर करना। किन्तु ज्ञान तत्व पढकर मेरी यह भ्रान्ति दूर हुई कि समाज में ऐसा कोई है ही नहीं जो व्यवस्था परिवर्तन का कोई परिणाम मूलक समाधान खोज सके। मुझे लगता है कि यह समाज सेवा भी है और सामाजिक विषयों में समाज की भ्रान्ति दूर करना भी।

उत्तर :– नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन है या सत्ता परिवर्तन इस विषय पर एक गंभीर लेख ज्ञान तत्व के इसी अंक में जा रहा है। पढ़कर आप फिर से प्रश्न करियेगा।

समाज सेवा, समाज सुधार और सामाजिक सुरक्षा बिल्कुल अलग–अलग विषय है। तीनों के समय और मार्ग भी अलग–अलग होते हैं जब राज्य व्यवस्था ठीक चल रही हो और समाज भी ठीक हो तब समाज सेवा का मार्ग आदर्श होता है। जब राज्य व्यवस्था

ठीक हो किन्तु समाज की विकृति का राज्य पर प्रभाव पड़ रहा हो तब समाज सुधार का प्रयत्न करना चाहिये। किन्तु जब राज्य व्यवस्था का दूषित प्रभाव समाज पर पड़ रहा हो तब सब काम छोड़कर भी व्यवस्था परिवर्तन में लगना चाहिये क्योंकि समाज को राज्य व्यवस्था से सुरक्षा चाहिये। मैं पूरी तरह समाज सुरक्षा को प्राथमिक कार्य मानकर उसी दिशा में लगा हूँ। लोग तम्बाकू और शराब पीना बंद कर दें, यह समाज सेवा हैं लोग जातिवाद और साम्प्रदायिकता से दूर रहें यह समाज सुधार हैं किन्तु लोक शासन की गुलामी से मुक्ति का प्रयत्न करें यह न समाज सेवा है न सुधार। यह पूरी तरह सुरक्षा और संघर्ष हैं। आप भले ही इस सेवा या सुधार मानें। मैं चाहता हूँ कि आपक मन की यह भ्रान्ति दूर होनी चाहिये और वह भ्रान्ति दूर हुई भी है जो मेरे लिये प्रसन्नता की बात है।

प्रश्न (4) श्री एम.एस. सिंगला, नाका मदार, अजमेर, 305007, राजस्थान।

ज्ञान तत्व अंक एक सौ दस में आपने आतंकवाद के कारणों का अच्छा विश्लेषण प्रस्तुत किया। यदि शासन की नीयत ठीक हो तब तो आपके सुझााव नीतियों में सुधार के लिये उपयोंगी हो सकते हैं किन्तु यदि शासन की नीयत ही खराब हो तब क्या होगा ? तब तो यही मानना होगा कि आतंकवाद की जननी सिर्फ शासन की नीयत ही है, अन्य कोई नहीं।

नर्मदा नदी पर बांध बनाने की जितनी जल्दी है, विस्थापन की नहीं। मेधा जी को आंदोलन करना पड़ा। अर्जुन सिंह ने आरक्षण का जहर घोलना शुरू कर दिया है। प्रतिदिन शासन अपनी गलत नीतियों को विकास या जनकल्याण के नाम पर जबरन समाज पर थोपता रहता है। इन्हीं नीतियों में से शासन से बुड़े लोग बंदर के समान बिल्लियों की सारी रोटी हजम कर जाते हैं। जनकल्याण के नाम से ही काम करने वाले सुखराम जयललिता और चौटाला की हजारों करोड़ प्रतयक्ष सम्पत्ति का पर्दाफाश हुआ है। अप्रत्यक्ष की तो सिर्फ कल्पना ही करना बाकी है। गाजियाबाद के एक सरकारी कर्मचारी और दूरदर्शन के एक निदेशक के घर से भी निकली सम्पत्ति सुखराम से कम नहीं थी। मायावती, लालू, क्वात्रोची आदि ज्ञात नामों की एक लम्बी सूची हो सकती है, अज्ञात नाम तो अभी अलग ही हैं।

समाज ऐसे गंभीर अंधेरे वातावरण में तीन प्रकार के प्रतिक्रियाएँ करता है (1) विचार प्रकट करके जिसमें ज्ञापन लेख शामिल हैं, (2) विरोध प्रकट करके जिसमें हड़ताल, चक्काजाम आंदोलन शामिल है, (3) टकराकर जिसमें हिंसा, बलप्रयोग शामिल हैं वर्तमान समय में भारत में तीनों ही प्रकार की प्रतिक्रियाएँ स्पष्ट दिख रही हैं अब तो समाज तीसरी दिशा में भी बढ़ने के लिये मजबूर हो रहा है जिसका एक उदाहरण आप नागपुर की महिलाओं के शौर्य प्रदर्शन में देख ही चुके हैं। सारे देश में हिंसा और आतंकवाद के वातावरण की वृद्धि जन आक्रोश की हिंसक अभिव्यक्ति मानी जानी चाहिये।

म आपसे सहमत हूँ कि अपराध को पथक–पथक करके गैर कानूनी कार्यों के निराकरण से न्यायलय को पथक किया जाना चाहिये। ऐसे कार्यो का निपटारा संबंधित विभागों पर छोड़ा जा सकता है जिस तरह इनकमटैक्स में है। किन्त, मैं आपसे यह जानने का उत्सुक हूँ कि निराश जनमानस यदि नागपुर सरीखी प्रतिक्रिया करता है तो हम उसका समर्थन क्यों न करें ? जब हमारे पास अन्य कोई मार्ग है ही नहीं तब समाज तो मार्ग खोजेगा ही चाहे वह अहिंसक हो या हिंसक।

मेंरे विचार में अहिंसा सभी समस्याओं का समाधान नहीं है। आज के शासन ने अहिंसा का लाभ समाज विरोधी तत्वों को देकर शरीफों को शराफत से जीने का दण्ड दे रखा है। आप अपने विचार स्पष्ट करें।

उत्तर :– मैं आपसे सहमत हूँ कि –

(1) शासन विकास के नाम पर समाज के सामाजिक कार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप कर रहा है।

(2) शासन समाज में वर्ग विभाजन कराक अपनी सत्ता बनाये रखने का प्रयत्न करता है। नर्मदा आंदोलन या आरक्षण का मुद्दा इसके कुछ उदाहरण है।

(3) शासन से जुड़े राजनेता और शासकीय अधिकारी चुपचाप करोड़ो अरबों की सम्पत्ति इकट्ठी करने में सक्रिय रहते है तब यह बात आम हो चुकी है, खास नहीं है।

(4) आज के शासन ने अहिंसा का लाभ समाज विरोधी तत्वों को दे रखा है।

किन्तु मैं आपकी इस धारणा से सहमत नहीं हूँ कि वर्तमान समय में विचार प्रकटीकरण, विरोध या टकराव के उदाहरण समाज के आक्रोश का प्रकटीकरण हैं मैं तो यह मानता हूँ कि इस विरोध प्रकटीकरण में समाज के आक्रोश का अंश दस पंद्रह प्रतिशत और एकत्रित सत्ता या सम्पत्ति की छीना झपटी का पचासी से नब्बे प्रतिशत है। नागपुर की महिलाओं का आंदोलन छोड़ दें तो अन्य लगभग सभी आंदोलन समाज को नुकसान ही पहुँचाने वाले हैं, लाभ नहीं। चाहे आरक्षण का आंदोलन हो या नक्सलवाद अथवा नर्मदा का आंदोलन सबके पीछे प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष सत्ता संघर्ष छिपा है।

नागपुर की हत्या की आप लोग बहुत प्रशंसा करते हैं मैने उस पर भी बहुत सोचा है। नागपुर की महिलाओं का आक्रोश निराश जनमानस की अभिव्यक्ति तो है पर समाधान नहीं। दुर्भाग्य यह है कि आप लोग अभिव्यक्ति के आक्रोश को समझकर समस्या का समाधान खोजने की अपेक्षा आक्रोश को ही समाधान मानने की भूल कर रहे हैं। नागपुर में महिलाओं द्वारा की गई हत्या से सबक लेकर हमें और अधिक तीव्र गति से समाधान की दिशा में कदम बढ़ाना चाहिये। क्या हम आप सब इतने निकम्मे और निराश हो चुके हैं कि अब शासन व्यवस्था से लोगों को न्याय नहीं दे सकते ? आपके समक्ष यदि कोई मार्ग नहीं है तो इसका यह अर्थ नहीं कि इस समस्या का समाधान हीं नहीं हैं सत्ता की नीयत खराब है। सत्ता बदलने से कोई फर्क नहीं पड़ा। इसलिये व्यवस्था बदलने के प्रयास प्रारंभ है। एक चलते हुए पंखे को डंडे से बन्द करने के प्रयास को अपक्षा स्विच का बटन दबाइये और परिणाम देखिये। मेरी तो इच्छा है कि समाज में हिंसा का समर्थन करने की अपेक्षा शासन व्यवस्था के पर कतरने का समर्थन अधिक अच्छे परिणाम देगा। हिंसा तो क्रान्ति का अंतिम विकल्प हैं किसी भी लोकतांत्रिक देश में हिंसक क्रान्ति का समर्थन न आवश्यक है न उचित। मेरा आपसे पुनः निवेदन है कि हिंसक क्रान्ति की अपेक्षा अहिंसक क्रान्ति के मार्ग में मदद करिये।

प्रश्न (5) श्री बच्छराज खटेर, 113 बी, मनोहर दास कटरा, कलकत्ता, बंगाल

आपकी बंग जी से चर्चा हुई। यदि कोई गुप्त बात न हो तो बताने की कृपा करें। मैं नहीं समझता कि सर्वसेवा संघ के साथ आपका स्थायी गठबंधन चल सकेगा।

अहिंसा के संबंध में ज्ञानतत्व में प्रकाशित आपके विचारों में कुछ उलझाव दिखता है। अंक एक सौ सात में आपने लिखा कि ''हम सब समाज में बढ़ रही हिंसा की मनोवृति के लिये अपनी नासमझो भरी अहिंसा के प्रचार को कारण रूप में स्वीकार करें और भविष्य में इस मुद्दे पर गंभीर विचार करके कोई निष्कर्ष निकाले''।

ज्ञान तत्व अंक एक सौ आठ में आपने लिखा कि ''मैं अहिंसा के प्रति पूरी तरह प्रतिबद्ध हूँ''। ज्ञान तत्व अंक एक सौ ग्यारह में आपने लिखा कि समाज में हिंसा, घृणा, द्वेष और षडयंत्र का सहारा लेना बिल्कुल अंतिम स्थिति में ही उपयोगी होता है''।

आपने उपरोक्त तीन वक्तव्यों में अहिंसा के भिन्न–भिन्न रूप दिखते हैं। प्रश्न गांधी का नहीं, अहिंसा का है। अहिंसा को समझने का मतलब है अहिंसा की शक्ति का प्रयोग करने की विधि का सम्पूर्ण ज्ञान।

उत्तर :– मेरे विचार, आचरण, क्रिया और योजना में न्यूनतम गुप्तता हो यह सच्चाई है। बंग जी से हुइ गंभीर चर्चा में कोई गुप्तता हो यह सच्चाई है। बंग जी से हुई गंभीर चर्चा में कोई गुप्तता नहीं है। मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि सर्वोदय के अधिकांश लोग निश्छल हैं। उस दिन भी चर्चा में यह बात आई। यही कारण है कि गांधी हत्या मे हुए धोखा के बाद सर्वोदय के लोग संघ के प्रति अत्यन्त सतर्क रहते है। ऐसी सतर्कता स्वाभाविक भी हैं। सर्वोदय के लोग छल–कपट से दूर रहने के कारण संघ की परछाई से भी दूरी बनाकर अपनी विवाद रहित सुरक्षा का प्रयत्न करते रहते हैं। दूसरी ओर मैं इस बात से भी पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि इस्लाम का पहला उद्देश्य येन केन प्रकारेण भारत को दारूल हरब से बदलकर दारूल इस्लाम बनाना है। संघ उनके इस प्रयत्न को येन केन प्रकारण रोकना चाहता है। संघ के अधिकांश लोग अपने इस प्रयास के प्रति पूरी तरह ईमानदार हैं चाहे इसके लिये उन्हें कितना भी छल प्रपंच क्यों न करना पड़े। मैं संघ के उद्देश्यों का पूरी तरह समर्थक हूँ मार्ग में कुछ मतभेद अवश्य हैं। हमारी बंग साहब से हुई चर्चा में यह बात आई कि सर्वोदय के अनेक कार्यकर्ताओं को मुझ पर संघ समर्थक होने का संदेह है। मैंने भी महसूस किया कि उनके कथन में सच्चाई तो है किन्तु मैं उनके सदेहो को दूर करने के लिये इस्लामिक खतरे को नजर अंदाज नही कर सकता। अर्थात् व्यक्तिगत रूप से मुझ पर सर्वोदय के विश्वास को अभी और समय लगेगा।

इसके बाद व्यवस्था परिवर्तन अभियान पर चर्चा हुई। बंग जी की टीम ने स्पष्ट किया कि चार सूत्रीय या तीन सूत्रीय संविधान संशोधन अभियान सर्वोदय का सव सम्मत प्रस्ताव है जिसे सर्वोदय पूरी ताकत से पूरा करेगा। प्रस्ताव पारित होने के बाद सवोदय की सक्रियता की कमी को उन्होंने स्वीकार किया और स्पष्ट किया कि सर्वोदय अब इस कार्य को युद्ध स्तर पर करने की योजना बना रहा है। यदि व्यवस्था परिवर्तन अभियान भी सर्वोदय के इस प्रस्ताव से सहमत है तो उसकी सक्रियता से सर्वोदय को प्रसन्नता ही होगी किन्तु एक साथ मिलकर अभियान चलाने के विषय में विचार करने का अभी कोई प्रस्ताव नहीं है। हम पथक–पथक भी सक्रिय हो सकते हैं। कुल मिलाकर मैं सम्पूर्ण चर्चा से पूरी तरह संतुष्ट रहा और मेरे मन में सर्वोदय के प्रति पूर्व सकारात्मक धारणा और मजबूत ही हुई।

अहिंसा के प्रति मेरे विचारों में आपको विरोधाभास दिखा। मैने कइ बार लिखा है कि अहिंसा मेरा सिद्धान्त नहीं है, व्यवहार है। मेरा सिद्धान्त तो यह है कि मैं व्यक्तिगत रूप से समाज विरोधी कोई कार्य न करूँ और सामाजिक रूप से समाज विरोधी कार्यो पर नियंत्रण में समाज का सहयोग करूँ। समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण का तरीका किसी एक सिद्धान्त पर न होकर उस समय की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जब समाज मजबूत हो तब न व्यक्ति को हिंसा का सहारा लेना चाहियें न शासन को। जब समाज विरोधी तत्व समाज से नियंत्रित न हों तो शासन को ऐसे तत्वों के विरूद्ध संतुलित हिंसा का सहारा लेना चाहिये और हमें ऐसी सरकारी हिंसा की सहायता करनी चाहिये। किन्तु जब शासन में ही अपराधियों का वर्चस्व हो जावे तो हमें येन केन प्रकारेण ऐसी सत्ता से मुक्ति का प्रयत्न करना चाहिये। ऐसे प्रयत्न में चाणक्य और कृष्ण के छल कपट का भी स्वीकार किया जा सकता है। अभी परिस्थतियाँ न तो पहले प्रकार की आदर्श हैं न तीसरे प्रकार की निराशा जनक। दूसरे प्रकार की स्थिति होने से हमें मजबूत शासन व्यवस्था की अपेक्षा करनी चाहिये और उसमें पूरा पूरा सहयोग करना चाहिये। शासन के अनेक कार्यो से उसे मुक्ति देकर उससे येक केन प्रकारेण समाज विरोधी तत्वों पर नियंत्रण की हमारी मांग हो यह मेरी सोच है।

मेरे विचारों में भ्रम इसलिये दिखता है कि हम अहिंसा और कायरता के अंतर को नहीं समझ पाते। यदि समाज में कायरता मजबूत होती है तो उसका कारण नासमझी भरी अहिंसा के प्रचार को मानना चाहिये। यदि समाज में अनावश्यक हिंसा बढ़ती है तो उसका कारण नासमझी भरी अहिंसा के प्रचार को मानना चाहिये। भारत में कमजोरों के विरूद्ध अनावश्यक हिंसा और अपराधियों के समक्ष कायरता का वातावरण लगातार बढ़ता जा रहा है जिसका दोष दो विपरीत विचार धाराओं का ना समझी भरा प्रचार है और कुछ नहीं। अहिंसा का अर्थ अहिंसक तरीके से अपराध नियंत्रण है न कि अहिंसा की सिर्फ बातें मात्र करना। मेरे तीन विचारों से सिर्फ एक बात निकलती है कि (1) वर्तमान लोकतांत्रिक भारत में मैं किसी भी प्रकार की सामाजिक हिंसा को अनावश्यक और त्याज्य मानता हूँ। (2) समाज में बढ़ रहे समाज विरोधी कार्यो पर अंकुश हेतु मैं और अधिक कठोर दण्ड़ का पक्षधर हूँ। (3) समाज और शासन में अभी किसी भी प्रकार की चाणक्य या कृष्ण को आदर्श मानकर नीति निर्धारण की आवश्यकता नहीं है किन्त, यदि कभी आवश्यकता हुई तो हम अहिंसक पराजय की अपेक्षा हिंसक विजय को अधिक महत्व देंगे। मेरे विचार में अहिंसा पर चर्चा करते समय कायरता और अहिंसा को साथ जोड़कर चर्चा करना अधिक अच्छा रहेगा।

प्रश्न (6) श्री रामनरेश कुशवाहा, आजमगढ़, यूपी

आपकी कल्पना का भारत की रूपरेखा पढ़ी। आपने ग्यारह समस्याएँ (1) चोरी, डकैती, लूट (2) बलात्कार (3) मिलावट (4) जालसाजी धोखा, (5) हिंसा आतंक, (6) भ्रष्टाचार, (7) चरित्र पतन, (8) साम्प्रदायिकता, (9) जातिय कटुता, (10) आर्थिक असमानता, (11) श्रम शोषण '' चुनी और इनका समाधान भी बताया। मैंने यह पुस्तक कई बार पढ़ी। पहले तो मुझे हवाई बातें लगीं किन्तु बाद में कुछ सार तत्व समझ आया। आज तक मैंने जिन विचारकों के विचार सुने या पढ़े उनमें समाधान के रूप में एक ही आदर्श वाक्य रहता है ''जब तक चरित्र नहीं ठीक होगा तब तक कुछ ठोक नहीं होगा''। उनसे पूछिये कि चरित्र बिगड़ा क्यों तो या तो चुप हो जाते हैं या कहते हैं कि बिगड़ गया। इसके आगे कहते ही नहीं। यदि दूसरा प्रश्न करिये कि ठीक कैसे होगा तब भी निरूत्तर रहते हैं । कहते हैं कि हम लोग अपना अपना चरित्र सुधार लें तो सब ठीक हो जायगा। ऐसे ऐसे हवाई उत्तरों की समाज में बाढ़ आई हुई है।

आपने समस्याओं की गहराइ तक जाने की कोशिश की हैं किन्तु ग्यारह समस्याएँ तो एक लाइन में है और समाधान बीस पृष्ट लम्बा है। किसी बिमारी का इतनी अधिक दवाओं से इलाज संभव नहीं। कोई छोटा समाधान बताइये।

उत्तर :– मैंने बहुत छोटा इलाज बताया हैं किन्तु समझाने में पृष्ट बढ़ गये। बीमारी के ग्यारह लक्षण आप देख रहे हैं। इलाज, तथ्य और परहेज इस तरह हैः–

(क) दवा – अधिकारों का विकेन्द्रीयकरण, सम्पत्ति पर वार्षिक कर तथा कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्य वृद्धि।

(ख) आपात दर्द – जब विशेष कष्ट हो तो कष्ट के स्थान पर गुप्त मुकद्मा प्रणाली का प्रयोग।

(ग) पथ्य – जीवन भत्ता।

(घ) अपथ्यया परहेज – (1) किसी भी प्रकार के टैक्स, (2) धर्म, जाति, भाषा, उम्र लिंग, गरीब, किसान आदि किसी भी प्रकार के भेदभाव या वर्ग निर्माणं

मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि उपरोक्त दवा का पथ्य और परहेज के साथ तीन माह तक भी सेवन किया जाय तो सभी ग्यारह समस्याओं से निश्चित छुटकारा हो सकता है। कुछ बिमारियाँ तो जड़ मूल से जा सकती हैं।

प्रश्न(7) श्री अशोक भाई, आगरा, यूपी

आपके विचार ''मेरे सपनों का भारत'' में पढ़े। आपने फांसी को समाप्त करने के स्थान पर सार्वजनिक फांसी तक की सिफारिश कर दी है। फांसी स्वयं में एक अमानवीय कार्य है। हम जिसे जीवन दे नहीं सकते उसका जीवन छीनने का हमें क्या अधिकार है ? फांसी सारी दुनिया से बंद करने का एक अभियान सा चल रहा है। धीरे–धीरे सफलता भी मिल रही है। ऐसे समय में फांसी का समर्थन बंसुरा राग माना जायगा। इससे अच्छा तो आपका वह सुझाव था जिसमें दोनों आंख से नेत्रहीनता स्वीकार करने वाले व्यक्ति को फांसी से मुक्त करने का प्रावधान था। वह सुझाव शामिल करने के स्थान पर आपने सार्वजनिक फांसी को जोड़कर अधिक कठिनाई पैदा कर दी।

उत्तरः– एक सम्पन्न परिवार आर्थिक कठिनाई में फंस रहा था। परिवार के जिम्मेदार लोग आर्थिक संकट से उबरने की योजना बनाने बैठे तो परिवार के एक सदस्य ने परिवार के खान पान का स्तर सुधारने की चर्चा छेड़ दी। परिवार के अन्य लोग उसकी बेवक्त चर्चा से हंस पड़े और उसे चुप कराकर आगे की योजना पर चर्चा करने लगे।

आप हमारी टीम के एक विचार सदस्य हैं सम्पूर्ण विश्व में हिंसा, अपराध ओर आतंकवाद बढ़ रहा हैं पूरा विश्व इससे चिन्तित है। हम आज हिंसा, अपराध और आतंकवाद की रोकथाम के उपायों पर चर्चा कर रहे हैं। इन उपायों में ही एक उपाय यह भी सामने आया कि दण्ड त्वरित, भयोत्पादक तथा और कठोर हों। इसी तारतम्य में कुछ मामलों में फांसी सार्वजनिक करने और नेत्रहीन रहकर जीने के फांसी के विकल्प की भी चर्चा सामने आई। वर्तमान दण्ड व्यवस्था और अधिक मानवीय हो यह आज की चर्चा का विषय नहीं। यह चर्चा तो तब उठेगी जब अपराध नियंत्रित होंगे। जो लोग अपराधों की रोकथाम के कुछ बहुत अच्छे कारगर सुझावों के साथ साथ फांसी बन्द करने की बात भी रखें तो वे भी सुने जा सकते हैं किन्तु जिनके पास अपराध नियंत्रण के विषय में सोच शून्य हो और सजा के मानवीयकरण पर ही चर्चा करें उनके सुझावों पर हम केवल हंस देते हैं। आप चूँकि अन्य मामलों में गंभीर हैं इसलिये हम आपसे निवेदन करते हैं कि समाज में बढ़ती हिंसा अपराध और आतंकवाद की रोकथाम पर पहले अपना मत व्यक्त करें तब मानवीय अमानवीय की चर्चा हो जायगी।

अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध हम एक अहिंसक युद्ध की दिशा में बढ़ रहे हैं। हम आप सब साथी तो अत्याचार अन्याय करने वालों पर निर्णायक रोकथाम की योंजना में लगे रहें और रेड क्रास वाले हमारे युद्ध में केवल मीनमेख निकालते हैं कि हमे कैसे युद्ध करना है ऐसी भूमिका ठीक नहीं। अतः सारी दुनिया के लोग फांसी के बारे में क्या कह रहे हैं या उसका क्या प्रभाव है यह विचारणीय विषय नहीं। विचारणीय यह है कि सारी दुनिया के हिंसा, अपराध और आतंकवाद का समाधान खोजने में सक्रिय लोगों की फांसी के विषय में क्या राय है। यदि ऐसे सक्रिय लोग फांसी बन्द करने की सलाह देते हैं तो विचारणीय है और निठल्ले लोग सलाह दें तो उनहे गैर जिम्मेदार मानकर आगे बढ़ना होगा। आपने फांसी की सजा के विकल्प के रूप में आंख निकालकर जीवित छोड़ देने के प्रस्ताव को विचारणीय माना इससे आपकी गंभीरता का पता चलता है अथवा कुछ लोग तो मेरे इस सुझाव को फांसी से भी अधिक अमानवीय कह दिया करते हैं। ये लोग मेरे प्रस्ताव को ठीक से पढ़े बिना ही घिसी पिटी प्रतिक्रिया में लपेट लेते हैं। मेरे पस्ताव म फांसी या अंधे होने के विकल्प मैं से एक को चुनने का निवेदन अपराधी करता है, शासन या न्यायालय नहीं। शासन किसी को उसके निवेदन के अभाव में अंधा नहीं बना सकता। लगता है कि आपने मेरा सुझाव पूरा पढ़ा है।

प्रश्न (8) श्री अनिल पाठक, व्यवस्था परिवतन कार्यालय दिल्ली।

आपके विचार पढ़े। बलात्कार की रोकथाम के लिये वैश्यावृति को प्रोत्साहित करने की बात कहकर आपने हमें चिन्ता में डाल दिया है। क्या बलातकार की रोकथाम के लिये वेश्यावृति को प्रोत्साहन आवश्यक और उचित मार्ग है ? मेरे विचार में तो नही।

उत्तरः– कार्य तीन प्रकार के है– (1) सामाजिक, (2) असामाजिक, (3) समाज विरोधी। वैश्यावृति सामाजिक कार्य न है न माना जाता है। वेश्यावृति असामाजिक कार्य है जिसे प्रोत्साहित तो नहीं किया जा सकता बल्कि निरूत्साहित ही करना चाहिये। मैने वैश्यावृति को प्रोत्योहन की बात कहीं नहीं कहीं।

किन्तु मेरा मानना है कि वैश्यावृति और बलात्कार में अन्तर करना चाहिये। बलात्कार समाज विरोधी कार्य है जिसे रोकने में हमें शासकीय कानूनों का भी सहारा लेना चाहिये। किन्तु वैश्यावृति असामाजिक कार्य होने से उसे समाज सुधार, सामाजिक भय या हृदय परिवर्तन की श्रेणी तक ही रखना चाहिये, कानूनी दण्ड में शामिल करने से हमारी बलात्कार नियंत्रण की शक्ति घटी है, बढ़ी नहीं। समाज की बुराइयों को रोकने में कानून या प्रशासन का हस्तक्षेप कोई अच्छी परंपरा नहीं है। इससे अपराध नियंत्रण में बाधा होती ह।

अपराधियों के दो कारण होते हैं (1) प्रवृत्ति, (2) मजबूरी। समाज में दो प्रकार के लोग हैं (1) जो मजबूरी को समझते ही नहीं और सारे अपराधों को प्रवृत्तिजन्य मानकर सिर्फ दण्ड की सिफारिश करते हैं (2) जो प्रवत्ति को समझते ही नहीं। सिर्फ मजबूरी के नाम पर समाज सुधार की बात करते हैं। मेरे विचार में दोनो ही लोग गलत है। वास्तविकता यह है कि दोनो दिशाओं में समन्वय बनाकर काम हो। प्राचीन समय में बलात्कार कम थे और आज बढ़े इसके प्रमुख कारण दोनो दिशाओं में भूल है। पहले अठारह वर्ष के बाद काम इच्छा पैदा होती थी और पंद्रह वर्ष में ही विवाह द्वारा पूर्ति हो जाती थी। बलात्कार के लिये तत्काल और कठोर दण्ड भी था। अब सामाजिक वातावरण के कारण काम इच्छा तो सोलह वर्ष में जगने लगी और पूर्ति पच्चीस में होने लगी। यह भी विचारणीय विषय है। इसलिए हमें बदले हुए वातावरण में नीति बनानी पड़ेगी। मेरा सुझाव है कि वैश्यावृत्ति को सामाजिक कुरीति मानने तक सीमित रखा जाय किन्तु अपराध की श्रेणी से निकाल दिया जावे। बलात्कार को अपराध में रखकर त्वरित और कठोर दण्ड की व्यवस्था हो।

प्रश्न (9) डा. सुरेन्द्र गुप्ता, एम.ए.पी.एच.डी. अम्बाला छावनी, हरियाणा।

ज्ञान तत्व एक सौ सात पढ़ा। आपका प्रयत्न सराहनीय है। आज राजनीति व्यवसाय बन गई है। भारतीय जनता पार्टी भी अब उसी दिशा में चलकर निराश कर रही है।

आरक्षण को देखकर तो राजनीति की पूरी पोल ही खुल जाती है। भारतीय संविधान की दुहाई देकर आरक्षण समर्थक नेता बार–बार अपने तर्क प्रस्तुत करते हैं कि संविधान आरक्षण की बात कह रहा है। सच्चाई यह है कि संविधान ने तो सिर्फ दस वर्षो के

लिये ही आरक्षण की व्यवस्था दी थी। अब यदि दस वर्षो बाद भी आरक्षण जारी है तो वह संविधान की मूल भावना के विपरीत है। आज का आरक्षण शोषण का हथियार बन चुका है जिसमें करोड़ो के मालिक या मंत्री मुख्यमंत्री तक उस हथियार का उपयोग करते समय दलित, शोषित, पिछड़ा आदि न जाने क्या–क्या उपनामों का उपयोग करने लगते हैं।

आपने सेंसेक्स, सकल घरेलू उत्पाद, मुद्रा स्फीति आदि के संबंध मं जो कहा वह भी महत्वपूर्ण है। सच्चाई यह है कि मीडिया वाले इन सब शब्दों को ज्यादा उछालते हैं। महंगाई तेजी से बढ़ रही हैं किन्तु कहीं से कोई आवाज नहीं उठती। इसी तरह विभिन्न चैनलों के विज्ञापन भी इतने अश्लील होते जा रहे हैं कि कोई भला आदमी परिवार के बच्चों के साथ देख ही नहीं सकता। अंत में मैं आपसे जानना चाहता हूँ कि–

(1) आरक्षण का खेल राजनीतिज्ञ क्यों खेल रहे हैं ?
(2) महंगाई का क्रय शक्ति पर क्या प्रभाव होता है ?
(3) मुद्रा स्फीति, सेन्सेक्स, सकल घरेलू उत्पाद का राष्ट्र की समृद्धि पर क्या प्रभाव होता है।

उत्तर :– (1) राज्य की आदर्श व्यवस्था होती है सुरक्षा और न्याय।
(2) राज्य की लोकप्रियता का आधार होता है सुख समृद्धि।
(3) राज्य (सत्ता) की अपनी मजबूती का आधार होता है विघटित और विभाजित समाज।

राज्य और राष्ट्र बिल्कुल भिन्न होते हैं। राज्य से मेरा तात्पर्य राजनैतिक व्यवस्था मात्र से है। लोकतंत्र में राज्य हमेशा समाज की एकता से भयभीत रहता है। अंग्रेजों ने भारतीय समाज को धर्म के आधार पर बांटना ही पयाप्त समझा क्योंकि उसे लोकतंत्र से कुछ लेना देना नहीं था किन्तु स्वतंत्रता के बाद भारत में राज्य ने सुरक्षा और न्याय के मार्ग को कठिन समझकर छोड़ दिया। सुख और समृद्धि को भी उसने आंशिक की छुआ। उसने अपना पूरा–पूरा ध्यान समाज विभाजन पर लगाया। साम्यवाद का तो आधार ही समाज व्यवस्था का नष्टीकरण होता है किन्तु समाजवादियों न भी साम्यवाद की वास्तविक परिभाषा को बदलकर वही राह पकड़ी। भारत अब तक उसी राह पर चल रहा है जिसे **Divide and rule** कहते है।

इसके लिए समाज को आठ आधारों पर विभाजित करने के प्रयत्न किये जाते हैं (1) धर्म, (2) जाति, (3) भाषा, (4) क्षेत्रीयता, (5) उम्र, (6) लिंग, (7) आर्थिक स्थिति, (8) उत्पादक उपभोक्ता। विभाजन के प्रत्येक कारक के पक्ष विपक्ष में वित्त पोषित एजेन्टों को खड़ा किया जाता है जो उक्त कारक के पक्ष विपक्ष में वातावरण बनाया करते हैं और शीघ्र ही समाज पक्ष विपक्ष में बंट जाता हैं जातीय आरक्षण एक ऐसा ही मुद्दा है।

भारत के सभी सवर्ण आरक्षण विरोधी होते हैं चाहे वे किसी भी राजनैतिक दल के क्यों न हों किन्तु सवर्ण राजनेताओं को अपनें आंतरिक संघर्ष में आरक्षित राजनेताओं के संगठित समर्थन की हमेशा आवश्यकता बनी रहती है इसलिये वे न चाहते हुए भी आरक्षित राजनेताओं की चापलूसी करते रहते हैं। आरक्षित श्रेणी के राजनेताओं को अच्छी तरह पता है कि वे राजनीति के अनारक्षित पदों में से तो कुछ पा नहीं सकते। वे चाहे जितना भी संगठित क्यों न हों, सवर्ण उन्हें उच्च पदों पर भरसक नहीं जाने देंगे। अतः आरक्षित राजनेता समाज के अन्य सरकारी नौकरी, शिक्षा आदि में आरक्षण के लिये एकजुट प्रयत्न करके अपने अपने परिवारों या रिश्तेदारों की प्रगति की राह बनाते रहते हैं। मंत्रीमंडल में आरक्षण का मुद्दा उठाकर देखिये तथा मंत्रिमंडल के कुछ पद अन्य जातियों के लिये आरक्षित करिये जो अर्जुन सिंह जी तो निश्चित ही उससे दुखी होंगे और विरोध करेंगे। वी.पी.सिंह का मैं नहीं कह सकता। क्योंकि आरक्षण अर्जुन सिंह जी का राजनैतिक शस्त्र मात्र है, विचार नहीं।

व्यवस्था में योग्यता के अतिरिक्त अन्य कोई मापदण्ड हो ही नहीं सकता चाहे वह मापदण्ड कोई भी क्यों न हो। सुविधा के लिये आप कोई भी मापदण्ड बना सकते हैं। मेडिकल में जातीय आरक्षण के समर्थक विश्वनाथ प्रताप सिंह अपनी बिमारी के समाय अपनी निष्ठाएँ राष्ट्र के प्रति आरक्षित नहीं रख सके। चन्द्रशेखर जी ने भी अपने इलाज के लिए राष्ट्रीय निष्ठाओं के उपर योग्यता को अधिक महत्व दिया यह सर्वविदित है। जब एसे राजनेता अपने इलाज में योग्यता को सर्वाधिक महत्व देते हैं राष्ट्र प्रेम के स्थान पर भी, जब वैसे नेता हम सबके इलाज के मामलें में योग्यता के स्थान पर जातीय आरक्षण की बात करते हैं तो ऐसे नेताओं की धूर्तता प्रमाणित होती है कि मूर्खता यह विचार का विषय ह। मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि आरक्षण का वर्तमान विवाद सवर्णो का आपसी सत्ता संघर्ष है और कुछ भी नहीं।

(2) महंगाई एक अस्तित्वहीन भावना है जो बार–बार प्रचार करने से आद आदमी महसूस करने लगता है। सन् सैतालीस के रूपये में इक्यावन गुनी गिरावट आई है अर्थात मुद्रा स्फीति के आधार पर सभी वस्तुएँ इक्यावन गुना से अधिक मूल्य पर बिक रही है तो वह महंगी और कम पर बिक रही है तो सस्ती मानी जायगी। कुछ मिलाकर महंगी होने वाली वस्तुएँ कम और सस्ती होने वाली अधिक हैं।

महंगाई का सीधा संबंध क्रय शक्ति से है। यदि क्रय शक्ति और वस्तु का मूल्य समान रूप से बढ़ता है तो महंगाई का कोई प्रभाव नहीं होता। भारत में सामान्यतया वस्तुओं के मूल्य की अपेक्षा क्रय शक्ति अधिक बढ़ी है। अतः महंगाई तो है ही नही। भारत का आम आदमी आर्थिक असमानता से त्रस्त हैं। अमीर आदमी की क्रय शक्ति सामान्य आदमी की क्रय शक्ति से कई गुना अधिक बढ़ रही है। इस असमानता से ध्यान हटाने के उद्देश्य से राजनीतिज्ञ महंगाई शब्द का व्यापक प्रचार करते हैं।

समाज को उतपादक और उपभोक्ता में बांटने में भी महंगाई शबद उपयोगी है। सोनियां गांधी का मै प्रशंसक हूँ कि वे बहुत नपा तुला बोलती हैं किन्तु अभी कुछ दिन पूर्व सोनिया जी ने मनमोहन सिंह को एक राजनैतिक पत्र लिखकर मेरे विश्वास को बहुत क्षति पहुँचाई है। उन्होने प्रधानमंत्री को गेहूँ की ओर इशारा करते हुए लिखा कि अनाज और दालों के भाव बहुत बढ़ गये हैं जिससे आम उपभोक्ता महंगाई की मार झेल रहा है। उसी पत्र की दूसरी लाइन में उन्होने किसानो की हालत पर चिन्ता व्यक्त करते हुए उन्हें लाभकरी मूल्य दिलाने की भी सिफारिश कर दी। मैं नहीं समझता कि इन दोनो बातों का एक साथ समाधान कैसे संभव है। यदि गेहूँ के दाम बढ़ेंगे तो उपभेक्ता को परेशानी होगी और घटेंगे तो किसान को। तीसरा समाधान है सरकारी सब्सीड़ी बढ़कार उसकी पूर्ति के लिये कहीं और टक्स बढ़ाना। देश के अन्य सभी राजनेता के बयान तो चालाकी भरे होते है। वे कभी महंगाई के खिलाफ बयान देते हैं तो कभी किसान की दुर्दशा के। सोनिया जी ने दोनो एक साथ मांग करके अनाड़ी राजनीतिज्ञ का परिचय दिया है। मेरा आपसे निवेदन है कि महंगाई के प्रचार के आधार पर उसके अस्तित्व को स्वीकार करने की भूल न करें। यदि और प्रश्न होगा तो इस विषय पर विस्तृत विवेचना की जा सकती है।

(3) मुद्रा स्फीति, सेंसेक्स, सकल घरेलू उत्पाद आदि के घटने–बढ़ने का राष्ट्र पर क्या प्रभाव पड़ता है यह मैं नहीं जानता। मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि इन सबका समाज पर त्वरित प्रभाव कुछ नहीं होता। मुद्रा स्फीति नगद रूपये पर अघेषित टैक्स होती है। इसका नकद रूपया रखने वालों को छोड़कर किसी पर कोइ प्रभाव नहीं पड़ता। सेंसेक्स उतार चढ़ाव का प्रभाव भी उस व्यापार से जुड़े लोगों पर ही होता है। अन्य पर नहीं। सकल घरेलू उत्पाद का भी अदृश्य प्रभाव ही होता है। भारत समाज के रूप में अभी दो प्रकार की आर्थिक समस्याओं से जूझ रहा है। (1) आर्थिक असमानता। (2) श्रम शोषक। भारत की आधी आबादी ऐसे लोगों की है जो

श्रमजीवी, किसान, ग्रामीण और सामान्य से कम क्रय शक्ति वाले हैं। आधी आबादी बुद्धिजीवी या व्यवस्था में लगा हुआ या शहरी निवास या सामान्य से अधिक क्रय शक्ति वालों की है। मुद्रा स्फीति, सेंसेक्स, सकल घरेलू उत्पाद आदि का आजकल ऐसे प्रचार हो रहा है जैसे ये सूचना न होकर प्रभाव है। यदि ये मात्र सूचनाएँ रही होती तो कोई चिन्ता की बात नहीं थी लेकिन धीरे–धीरे इनका सामान्य जन–जीवन पर प्रभाव अनुभव कराने के सुनियोजित प्रयत्न हो रहे हैं। मुद्रा स्फीति चार से छः होते ही आम आदमी को मानसिक मंहगाई से परेशानी शुरू होने लगती है। सेन्सेक्स छः हजार से बढ़कर बारह हजार हुआ। और कुछ दिन पहले बारह हजार से घटकर साढ़े दस हजार हो गया तो भारत के वित्त मंत्री तक को चिन्ता व्यक्त करनी पड़ी। आडवानी जी ने भी चिन्ता व्यक्त की। कई पेशेवर अर्थशास्त्रियों ने तो इस सेंसेक्स गिरने से गरीब निवेशकों को होने वाले नुकसान का आकलन करके भी आठ हजार करोड़ बता दिया। मुझे तो कुछ नहीं दिखा कि समाज के आम नागरिकों पर इसका क्या प्रभाव पड़ा। इसी तरह सकल घरेलू उत्पाद भी है। वर्ष में एक दो बार यह बता दिया जाय तो सूचनार्थ प्रयाप्त है लेकिन रोज रोज इसकी अनावश्यक चर्चा भी राजनैतिक चालबाजी के अलावा कुछ नहीं। मनमोहन जी के सत्ता में आने के बाद तीनों शब्दों के प्रयोग का प्रचलन बहुत बढ़ा है। मेरे विचार में तो इन तीनों शब्दों का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर जितना प्रभाव होता है उससे कई गुना अधिक समाज को भावनात्मक रूप से धोखा में इसका उपयोग हो रहा है।

मैं महसूस करता हूँ कि भारत के अर्थशास्त्रियों, राजनेताओं तथा सामान्य लोगों को भी तीनों शब्दों का प्रत्यक्ष प्रभाव दिखता है फिर मुझे क्यों नहीं दिखता ? मुझे संदेह होता है कि कहीं मैं ही तो भूल में नही हूँ किन्तु जब मैं किसी अर्थशास्त्री से चर्चा करता हूँ तब मुझे विश्वास होता है कि मैं ठीक हूँ। इससे मेरा आत्मविश्वास बढ़ता है। मैं इस मामलें में और चर्चा का स्वागत करूँगा।

6/1/114 ढ प्रश्न (10) श्री रामनरेश शर्मा, बरेली, उत्तर प्रदेश।

आप धर्म परिवर्तन पर प्रतिबंध की सलाह देते हैं। प्रसिद्ध विचारक तथा स्तंभ लेखक खुशवन्त सिंह जी ने पंजाब केसरी तीन जून में लेख लिखकर ऐसे किसी कानून को गलत बताया हैं।

आपका इस संबंध में क्या विचार है,

सामयवादियों के संबंध मैं भी आप अपने विचार व्यक्त करें।

उत्तर :– मैने पंजाब केसरी का वह लेख पढ़ा। खुशवन्त सिंह जी एक स्वतंत्र विचारक न होकर प्रतिबद्ध विचारक है। इनका नाम देखकर ही पता चल जाता है कि ये हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों तथा इसाइयों की तरफ अधिक झुके होंगें। उन्होने मुख्य रूप से पांच बाते लिखी है।

(1) इसाई धर्म परिवर्तन कराते नहीं।उनकी सेवा और प्रेम से लोग धर्म परिवर्तन करते हैं।

(2) भारत में इस्लाम ने धर्म परिवर्तन के लिये कभी बल प्रयोग नहीं किया। यदि किया होता तो एक भी हिन्दू भारत में नही होता। भारत में इस्लाम का विस्तार सूफी सन्तों ने किया, मुस्लिम राजाओं या कट्टर पंथियों ने नहीं।

(3) हिन्दू धर्म की छुआछुत और गैर बराबरी ने अछूतों को धर्म परिवर्तन हेतु प्रेरित किया।

(4) कुछ भाजपा शासित राज्यों ने धर्म परिवर्तन रोकने के उद्देश्य से एक कानून बनाया है जिसके अनुसार धर्म परिवर्तन करने के प्रयत्न को गैर जमानती अपराध बनाया गया है। इसे ये लोग धर्म स्वतंत्रता कानून कहते हैं जबकि यह उससे ठीक उल्टा है। क्योंकि इससे नागरिकों को अपना धर्म चुनने की स्वतंत्रता का हनन होता है। यह कानून संविधान की मूल भावना के भी विपरीत है।

(5) आदिवासी या वनवासी हिन्दू नहीं थे। उनके अपने देवी देवता और धर्म था। उनका वनवासी और आदिवासी नाम ही स्पष्ट करता है कि वे हिन्दू नहीं थे।

मैने सुशवन्त जी के पांचों निष्कर्षों पर अलग–अलग विचार किया।

(1) इसाइयों के विषय में मै उनके विचारों से आंशिक सहमत हूँ। इसाई लोग आमतौर पर प्रत्यक्ष धर्म परिवर्तन कराने से बचते हैं। सेवा, सहायता, प्रेम और सद्भाव के पीछे उनका अप्रत्यक्ष उद्देश्य धर्म परिवर्तन होता है जो कभी कभी लोभ लालच छल कपट तक चला जाता है। इसाई धर्म विचारों से कम, आर्थिक सम्पन्नता के प्रभाव से अधिक बढ़ता है। यह बात बहुत अच्छी न होते हुए भी बहुत बुरी नहीं कही जा सकती। लोभ लालच और छलकपट को अलग–अलग करके देखना चाहिये। लोभ लालच क्रय–विक्रय का व्यापारिक सिद्धान्त है जिसे धर्म के साथ जोड़ना अनैतिक तो है किन्तु अपराध नहीं। छल कपट को दण्डनीय अपराध माना जा सकता है किन्तु पैसे लेकर धर्म बदलने को दण्डनीय अपराध मानने के मैं विरूद्ध हूँ। यह कार्य मेरी नजर में समाज विरोधी नहीं है, असामाजिक है।

(2) इस्लाम ने अपने शासन काल में बल प्रयोग नहीं किया और इस्लाम भारत में सूफी सन्तों क प्रभाव से बढ़ा यह बात मेरे विचार में पूरी तरह गलत है। खुशवन्त सिंह जी ने पता नहीं कहाँ से तथ्य खोजकर सिद्ध कर दिया कि इस्लाम ने बल प्रयोग का सहारा नहीं लिया। कुछ लोग दीवारों तक में चुनवा दिये गये ऐसा मैंने सुना है। खुशवन्त सिंह जी ने निष्कर्ष निकाला है कि हिन्दुओं के अत्याचारों से पीड़ित निम्न वर्ग स्वेच्छा से मुसलमान बना। यदि इतना ही सच है तो ब्राम्हण और क्षत्रिय क्या मुसलमान नहीं बने ? मेरी सलाह है कि खुशवन्त सिंह जी इस संबंध में और खोज करें। खुशवन्त सिंह जी को जजिया कर के विषय में भी बताना चाहिय। खुशवत्न सिंह जी यह भी बताने की कृपा करें कि अफगानिस्तान में कानून के अनुसार यदि कोई हिन्दू मुसलमान बन जावे तो मान्य है किन्तु यदि मुसलमान हिन्दू या इसाई बन जावे तो उसे फांसी हो सकती है। यदि वह पुनः मुसलमान बने तो छोड़ा जा सकता है। यह बल प्रयोग है या नहीं। अफगानिसतान में बुद्ध की मूर्तियों को तोड़ना बल प्रयोग है या नहीं। कहीं मुसलमानों को सहृदयता का प्रमाण पत्र देकर खूशवन्त जी ने भूल तो नहीं कर दी है, यह स्पष्ट होना आवश्यक है।

(3) हिन्दुओं की छुआछूत और गैर बराबरी ने हिन्दुओं को नुकसान पहुँचाया यह सच है। इसके कारण भी अनेक लोग दूसरे धर्मो मे गये यह भी सत्य है। किन्तु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि दूसरों ने ऐसे लोगों को धर्म परिवर्तन हेतु प्रेरित नहीं किया। आदर्श भाईचारा तो तब होता जब अन्य धर्म प्रमुख हिन्दुओं को छुआछूत और गैर बराबरी की बीमारी से हटने के लिये प्रेरित करते। हिन्दुओं की बुराइयों का लाभ उठाना भले ही अपराध न हो किन्तु वैमनस्य का आधार तो है। हिन्दुओं में आपस में चाहे लाख बुराई हो किन्तु उन्होने दूसरे धर्म वालों को अपने धर्म में शामिल करने के प्रयत्न नहीं किये। हिन्दुओं की यह धारणा इनकी मूर्खता भले ही हो किन्तु एक उच्च आदर्श तो है। खुशवन्त सिंह जी उस हिन्दू धर्म की तुलना, जो बहुमत में होते हुए भी साम्प्रदायिक सद्भाव का एसा उच्च सिद्धान्त बनाकर रखता है, उस इसलाम और इसाइयत से कर रहे हैं जो हमेशा हिन्दू धर्म को कमजोरियों का लाभ उठाकर अपनी संख्या बढ़ाने की ताक में रहता है। यदि भारत में कोई हिन्दू स्वेच्छा से धर्म बदल भी लेता तो साम्प्रदायिक टकराव पैदा नहीं होता क्योंकि हिन्दू इसे अपना दोष मानकर संतोष कर लेते किन्तु जब अन्य धर्मावलम्बियों ने इस कमजोरी को धर्म परिवर्तन का धंधा बना लिया तब सद्भाव बिगाड़ने का दोष भी उन्हें ही स्वीकार करना होगा।

(4) मेरे विचार में धर्म स्वतंत्र सम्बन्धी कानूनों के सम्बन्ध में खुशवन्त सिंह जी की जानकारी गलत है। धर्म परिवर्तन करने पर रोक नहीं है कराने पर रोक है। करने और कराने में जमीन आसमान का फर्क है। यह कानून पिछले कई दशकों से मध्यप्रदेश में लागू

है। चूँकि धर्म परिवर्तन करने पर रोक नहीं है इसलिये खुशवन्त जी की सारी चिन्ताएँ भी निराधार है। मै स्वयं ऐसे कानून का पक्षधर हूँ जो धार्मिक प्रतिस्पर्धा में टकराव के कारणों को कम कर सके। साम्प्रदायिकता दूर करने के लिये हिन्दुओं के मन से यह भय दूर करना आवश्यक है कि उन्हें नोच खाने के लिये अनेक गिद्ध चारों ओर मंडरा रहे हैं। इन गिद्धों ने यदि हिन्दुओं के मन में अपनी ओर से एसा भाव नहीं भरा तो किसी कानून द्वारा हिन्दुओं में सुरखा का विश्वास पैदा करना साम्प्रदायिक टकराव रोकने का सर्वोत्तम मार्ग है। मैने तो इन कानूनों से भी हटकर एक कानून का सुझाव दिया है कि धर्म परिवर्तन करने वाले को ग्राम सभा की अनुमति लेनी आवश्यक होगी। इसमें कोई कठिनाई नहीं आयेगी। कोई भी व्यक्ति किसी की भी पूजा आराधना के लिये स्वतंत्र होगा। किन्तु यदि वह व्यक्ति अपने धर्म का पंजीकरण दूसरे धर्म में कराता है तो उसे अनुमति लेनी आवश्यक होगी।

भाजपा शासित कुछ राज्यों के धर्म परिवर्तन करन और कराने के अंतर में भ्रम फैलाने का प्रयास हो रहा है जो खुशवन्त सिंह जी जैसे विद्वान के लिये चिन्तनीय है। छत्तीसगढ़ के आदिवासियों को शराब बनाने और पीने की छूट है किन्तु खरीदने बेचने पर रोक है। यदि धर्म परिवर्तन की छूट है किन्तु धर्म खरीदने और बेचने पर रोक है तो दोनों बातें एक कैसे हो सकती हैं। छत्तीसगढ़ में आदिवासो अपनी खुद की जमीन बिना अनुमति नहीं बेच सकते। यदि जमीन बेचने के लिये अनुमति अनिवार्य करना मौलिक अधिकारों का उल्लंघन नहीं है तो धर्म परिवर्तन हतु अनुमति लेने के कानून से कौन सा मौलिक अधिकार उल्लंघन होगा ? मेरा खुशवन्त सिंह जी से निवेदन है कि भारत को धर्म के आधार पर संख्या विस्तार के प्रयत्नों के अखाड़े के रूप में बनाना ठीक नहीं है अन्यथा विदेशी शक्तियों के बल पर भारत धार्मिक छीना झपटी में फंस कर अपनी शक्ति गंवा सकता है।

(5) खुशवन्त सिंह जी ने आदिवासी और वनवासी शब्दों के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि आदिवासी हिन्दू नहीं है। मेरे विचार में आदिवासी और वनवासी शब्द तो पचास साठ वर्षों के हैं जबकि आदिवासी का हिन्दू होना न होना हजारों वर्ष पुराना है। प्रश्न उठता है कि ये हिन्दू नहीं है तो किस धर्म के हैं ? आदिवासी या वनवासी शब्द तो कोई भिन्न धर्म सूचक शब्द नहीं है। यदि ये शूद्र थे तब भी शूद्र शब्द हिन्दुओं का है। उनकी पूजा पद्धति भिन्न होने से उनका धर्म भिन्न होगा ऐसा अर्थ खुशवन्त सिंह जी ने कैसे निकाल लिया ? हिन्दुओं में अनेक लोग तो अनीश्वरवादी भी हैं हिन्दुओं में कभी एक पूजा पद्धति या एक ईश्वर की बाध्यता नहीं रही।

कुल मिलाकर इस लेख ने मेरे मन में कई शंकाएँ पैदा कर दी हैं जो आगे चर्चा से ही दूर हो सकती हैं। मैं खुशवन्त जी से भी इस संबंध में और जानकारी की अपेक्षा करता हूँ जिससे यदि मेरे कथन में कोई असत्य हो तो सुधार सकूँ।

आपने साम्यवाद के विषय में कुछ विसतृत चाहा है। मैं प्रयत्न करूँगा कि अगले अंक में शीर्ष लेख के रूप में साम्यवाद की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत करूँ।

उत्तरार्ध

विनोवा जी का स्मरण

(मिलान से पीटर डिबेनडेटो)

सुप्रसिद्ध गांधीवादी एवं आयुर्वेद विशेषज्ञ डा. आर्यभूषण भारद्वाज ने यहाँ ''गीता'' पर प्रवचन देते हुए कहा कि यदि विश्व में वर्तमान व्यवस्था जारी रही तो अमेरिका में 11 सितम्बर 2001 की हुई त्रासदी की पुनरावृत्ति से विश्व को नहीं बचाया जा सकेगा। उन्होने स्मरण दिलाया कि जिस दिन दुर्भाग्यवश यह त्रासदी हुई उस दिन सर्वोदय भूदान नेता आचार्य विनोवा भावे का जन्म दिन था। श्री भारद्वाज ने ये उदगार इटली के मिलान शहर के स्टडी आर्ट आरियंटल सभागृह में आयोजित सभा में व्यक्त किए।

ज्ञातव्य है कि डा. भारद्वाज पश्चिमी दुनिया के देशों संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, यूरोप, सहित अमेरिका के तीन माह के भ्रमण पर गये है। अपने भ्रमण की शुरूआत उन्होने मिलान से की। इस कार्यक्रम का आयोजन ''गाँधी इन एक्शन'' नामक संस्था की यूरोपीय इकाई ने सांस्कृतिक संस्था ए.आई.एस.ए. के सहयोग से किया जो भारतीय संसकृति और आयुर्वेद के विकास की दिशा में कार्यरत है। यह संस्था यूरोप में 1999 से सक्रिय है।

राष्ट्रीय यात्रा का कार्यक्रम

दिनांक 26 जुलाई 2006 से 2 अक्टूबर तक बजरंगलाल जी. आचार्य पंकज तथा विनय जी मिलकर पूरे भारत के सौ स्थानों पर सभाएँ ले रहे हैं। प्रतिदिन दो बैठके या सभाएँ होंगो। यदि दूरी डेढ़ सौ कि.मी. से अधिक होगी तो एक सभा भी हो सकती है। समय की कमी होने पर दो टोली भी हो सकती हैं जिसमें एक में बजरंगलाल जी तथा दूसरी में आचार्य पंकज, विनय जी तथा और लोग हो सकते हैं। प्रयत्न किया जायगा कि दो टोलियाँ विशेष स्थिति में ही बनें। यद्यपि यात्रा रामानुजगंज से 26 तारीख से प्रारंभ होगी किन्तु उस औपचारिक स्वरूप एक अगस्त को रत्नागिरी महाराष्ट्र में प्राप्त होगा। हमारा प्रयत्न संवैधानिक व्यवस्था परिवर्तन तक सीमित है जिसके परिणाम स्वरूप स्वतः ही राजनैतिक सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन हो जायगां यह प्रयत्न प्रारंभ करने का पहला प्रयास लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने किया था। ऐसा मानकर हम औपचारिक प्रारंभ तिलक जी की जन्म तिथि एक अगस्त का उनके जन्म स्थल रत्नागिरी से कर रहे हैं। हम रामानुजगंज से रायपुर, भिलाई, दुर्ग, गोन्दिया, नागपुर, होते हुए एक अगस्त को रतनागिरी पहुचेगे। वहाँ से कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, उड़ीसा, बंगाल, उत्तर बिहार, उत्तर यूपी, उत्तरांचल, हिमाचल, पंजाब, हरियाणा होते हुए अनुमानतः इक्कतीस अगस्त को दिल्ली पहुँचेगे। पुनः एक सितम्बर को दिल्ली से चलकर राजस्थान, गुजरात, दक्षिण मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ, झारखंड़, दक्षिण बिहार, मध्य यूपी होते हुए बीस सितम्बर को दिल्ली पहुँचेगे। बाइस तारीख को पुनः दिल्ली से चलकर मध्यप्रदेश तथा दक्षिण यूपी होकर दो अक्टूबर को गांधी समाधि पर समाप्त करने की योजना है। इस यात्रा में एक से सवा घंटे का भाषण, एक घंटे का प्रश्नोत्तर, एक घंटा कार्यकर्ताओं से चर्चा तथा एक घंटा पत्रकार वार्ता रखी जा सकती है। यात्रा वाहन से होगी जिसके खर्चे में आयोजक गण पांच सौ रूपया प्रति आयोजन मदद करेंगे। यात्रा में पयाप्त मात्रा में साहित्य भी विक्रय के लिये होगा जो लागत मूल्य या उससे कम पर ही उपलब्ध हागा। साहित्य विक्री में ज्ञान तत्व मंथन, मेरे सपनो का भारत तथा व्यक्तित्व और कृतित्व पर विशेष जोर रहेगा। ज्ञान तत्व पाक्षिक के भी वार्षिक या आजीवन ग्राहक अधिक से अधिक बनें यह प्रयास करना है। प्रत्येक जिले में एक कमेटी का गठन भी हो यह प्रयास करना है। संकलप पत्र कुछ भरे जावें और कुछ भरे जाने की पृष्ठभूमि बनाते जायेंगे।

आयोजक यह प्रयास करेंगे कि सभा का समय स्वागत या स्वागत भाषण या स्थानीय वक्ताओं के भाषण में न्यूनतम लगे या न लगे। या तो अध्यक्षता कोई न करे या करें भी तो वह बजरंगलाल जी के पूर्व ही बोल ले, पश्चात् नहीं। सभा का प्रारंभ धरतो माता के प्रतीक ग्लोब के माल्याणपण से भी हो सकता है तथा सीधा भी। यदि आयोजक किसी और परंपरा से करावें तो भी उनकी स्वतंत्रता है।

कविता पाठ, गीत आदि भी यदि बहुत आवश्यक हो तभी अनुमति दें अथवा सामान्यतया समय बचाना उचित होगा। कोई अच्छे गायक हों तो ज्ञान गीत माला में से कोई एक गीत गा दें। शंका समाधान, प्रश्नोत्तर, कार्यकर्ता बैठक का समय कम न हो यह विशेष ध्यान रहे। आयोजन किसी अन्य संस्था के बैनर और व्यवस्था में भी हो सकता है किन्तु आयोजन में समाज के सब तरह के लोगों को बुलाने का प्रयत्न होना चाहिये। आयोजक से अपेक्षा है कि वे अपना एक कार्यकर्ता पूर्व आयोजन स्थल पर भेज देवें जो हमारे लिय मार्गदर्शक का काम करेंगे। हम उन्हे अपने साथ गाड़ी में ले लेंगे।

आयोजक प्रयत्न करें कि लोक संविधान सभा के लिये अपने जिले के तीन नाम दे दें। यदि अन्य जिलों के कार्यकर्ता भी दे सके तो और सुविधा होगी। लोक संविधान सभा बहुत जल्दी बनानी आवश्यक है। संकल्प पत्र जितने तैयार हो वह भी दे दें। यदि किसी जिले की जिला कमेटी बनी हो तो वह भी दे दें।

(1) श्रो महेन्द्र नेह, कोटा, राजस्थान।

ज्ञानतत्व पढ़ता रहता हूँ। आपके कार्यालय से एक पत्र मिला जिसके अनुसार ज्ञानतत्व मिलने और उपयोगिता की जानकारी मांगी गई है। ज्ञानतत्व मुझे मिलता भी है और उपयोगी भी है किन्तु यदि आप इससे ज्यादा कहीं और भेजना उपयोगी माने तो मुझे आपत्ति नहीं है।

आप प्रश्नों के ठीक ठीक उत्तर देने का प्रयास करते हैं। आप गांधीवाद सी सम्पूर्णता में क्या कमी देखते हैं ? व्यवहार में आजादी के बाद वह सफल क्यों नहीं हो सका ?

उत्तर :– सन् दो हजार चार के अन्त तक ज्ञान तत्व विचार मंथन तक सीमित था। अपनी आर्थिक क्षमता के आधार पर करीब एक हजार प्रतियाँ जाती थीं जिनके शुल्क की चिन्ता नहीं रहती थी। अब ज्ञान तत्व विचार मंथन के साथ–साथ विचार प्रसार का माध्यम भी बन रहा है। ज्ञान तत्व की प्रसार संचया एक हजार से बढ़ाकर दस हजार करने का लक्ष्य बनाया जा रहा है जो स्वाभाविक है कि सशुल्क सदस्यता वृद्धि के बिना कठिन दिखता हैं कई साथियों में सशुल्क ग्राहक संख्या वृद्धि के लिये सक्रियता आई भी है जिनमें भी महावीर सिंह जी दिल्ली, श्री ओम प्रकाश दुबे दिल्ली, श्री अमरसिंह जी जयपुर, श्री जी.पी. गुप्त छतरपुर, श्री श्रुतिवन्तु दुबे सीधी, श्री कृष्ण कुमार रूंगटा धनवाद, श्री अशोक त्रिपाठी जी बनारस आदि प्रमुख हैं। हमारे जिन वर्तमान पाठकों का न शुल्क आया न ही कई महिनों से कोई पत्र आया उन सबको कार्यालय से टटोलने हेतु एक पत्र गया था। जो पाठक ज्ञान तत्व पढ़ते हैं वे यदि शुल्क नहीं भी भेज पाते हैं तो उनका ज्ञान तत्व भरसक बन्द नहीं होगा। आप हमारे एक प्रबुद्ध विचार मंथन सहयोगी होने से आपका तो प्रश्न ही नहीं है।

कोई भी विचार सम्पूर्ण नहीं होता। गांधीवाद भी नहीं। किन्तु गांधीवाद के विचारों का प्रयोग गांधी की मृत्यु के साथ ही समाप्त हो गया। गांधी जी के आंदोलन में दो प्रकार के लोग थे (1) वे जो गांधी जी के कथन पर बिना विचार किये ही पूरी ईमानदारी से अनुशरण करते थे। (2) वे जो गांधी जी के कथन को खूब समझते थे और न चाहते हुए भी उनका उपर उपर अनुशरण करते हुए दिखते थे। पहले प्रकार के लोग सत्ता से दूर रहे और दूसरे प्रकार के लोगों ने सत्ता को जकड़ लिया। गांधी जी हमेशा ही ग्राम स्वराज्य को प्रथम और आदर्श ग्राम को उसका स्वाभाविक परिणाम बताते रहे किन्तु गांधी जी के बाद राजनेताओं ने छलपूर्वक आदर्श ग्राम को ही ग्राम स्वराजय का नाम देकर ग्राम स्वराज्य के प्रयत्नों को छुपा लिया। गांधी जी के पहले प्रकार के अनुयायियों ने पूरी ईमानदारी से प्रयत्न किया किन्तु परिणाम विपरीत हुए क्योंकि किये गये प्रयत्नों में गांधीवाद का प्रथम चरण शामिल ही नहीं था। गाांधीवाद की असफलता का कारण न गाांधीवाद की असफलता है, न प्रयोग करने वालों के पयत्नों की कमीं गांधीवाद की असफलता का कारण राजनेताओं द्वारा गांधीवाद के नाम पर नकली गांधीवाद के प्रसार प्रचार से जुड़ा है। अब यह बात धीरे धीरे गांधीवादी मित्रों के समझ में आ रही है और तब गांधीवाद कसौटी पर होगा कि वह समस्याओं के समाधान में कितना सफल होता है।

(1) डॉ. ताराचन्द्र, हालु बाजार, भिवानी, हरियाणा

ज्ञान तत्व पढ़ता रहता हूँ। मैंने आपको लिखा था कि भारत सरकार की रोजगार गारंटी योजना से प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन दो से तीन रूपया ही प्राप्त होगा जो उसके जीवन यापन के लिये इतना अपर्याप्त है कि व्यक्ति की आंख में मिर्च डालने जैसा हैं आपने मेरे गणित की भूल न निकालकर उल्आ मेरे गणितीय ज्ञान पर ही आक्षेप कर दिया। आपने भिखारी को दो रूपया देकर वाहवाही लूटने का प्रयास करने वाले की प्रशंसा की। क्या आपने सोचा कि दिन भर काम कराकर उसे दो रूप्ये देना तो उपवास कराने जैसा है। मालिक नौकर से काम करवाकर उसे मजदूरी के नाम पर दो तीन रूप्ये देकर कहे कि मैने अहसान कर दिया यह बात मेरे समझ में नहीं आई। आपने मेरी निष्ठा पर आक्षेप किया है। मैं गंभीरता पूर्वक सोचता हूँ तो शक होता है कि कहीं आप ही तो वैसे नहीं है ? हम जो भी लिखते हैं ठोस आधार पर लिखते हैं हवा में नहीं।

मैं पेशेवर लेखक नहीं जैसा आप समझते हैं। मैंने अब तक जो भी लिखा है उसके बदले आपसे न कभी कुछ धन मांगा न आपने दिया। आपने तो अब तक धन्यवाद तक नहीं दिया जबकि मैं लिखने में अपना साधन और समय खर्च करके ही लिखता हूँ, इतना आप भी बखूबी समझते हैं।

उत्तरः मैने आपके गणितीय निष्कर्षों को दरकिनार करके योजना की पूर्व की योजनाओं से तुलना की थी। मैने अपने लेख ज्ञान तत्व अंक एक सौ दो में साफ साफ लिखा था कि रोजगार गारंटी योजना अपर्याप्त है इसे वर्ष भर प्रत्येक बेरोजगार के लिये तथा अधिक ज्ञम मूल्य देने वाली होना चाहिये किन्तु भारत में रोजगार की यह पहल प्रशंसनीय है क्योंकि पिछले वर्षों में किसी भी सरकार ने इतनी तुच्छ शुरूआत भी नहीं की। आपने अपने पत्र में मेरी प्रशंसा को यह कहकर मिर्च की मुट्ठी पाठकों की आंख में डालने जैसा बताया कि इस योजना में तो प्रत्येक व्यक्ति को सिर्फ तीन चार रूपये ही मिलते हैं जो अपर्याप्त है। ज्ञान तत्व अंक एक सौ ग्यारह में मैने पुनः लिखा कि मैं पिछली योजनाओं की तुलना में इस योजना को को अच्छा बता रहा हूँ और आप कोई तुलना न करके सिर्फ योजना की बुराई कर रहे हैं। इससे यह धारणा बनती है कि आप योजना लागू करने वाले दलों के पेशेवर विरोधी हैं। यहाँ पेशेवर शब्द का उपयोग दलों शब्द के साथ होने से राजनैतिक संदर्भ रखता है, आर्थिक नहीं। पता नहीं आप जैसा विद्वान राजनैतिक संदर्भ को आर्थिक संदर्भ मानने की भूल कैसे कर बैठा। आपने जो कुछ लिखा वह सब ठीक लिखा अंतर सिर्फ यह है कि हम प्रशंसा आलोचना को सापेक्ष विषय मानकर सरकारों की तुलना पर निष्कर्ष निकालते हैं और आप निरपेक्ष विषय मानकर उपयागिता के आधार पर निष्कर्ष निकालते हैं।

मैंने भिखारी का उदाहरण दिया उसमें मैंने कहीं काम करके दो रूप्या देने की बात नहीं लिखी। आपने उसे काम करवाकर उपवास की सलाह से जोड़ दिया। मेरी सलाह है कि ठोस लिखने के पूर्व ठोस पढ़ना भी आवश्यक है। मैं पुनः कहता हूँ कि जो व्यक्ति भिखारी को कभी एक पैसा नहीं दिया वह दो रूप्या देने वाले की आलोचना न करे तो अच्छा है। मेरी यह भी सलाह है कि यदि कोई

व्यक्ति ऐसे दो रूप्या देने वाले की प्रशंसा करे तो उसे कम से कम मिर्च की मुट्ठी आंख में डालने जैसी भाषा से अवश्य हो बचना चाहियं। छुट्टा सांड सरीखा किसी को कुछ भी लिखना कुछ भी कहना अपनी ही आदत खराब करता है दूसरों की नहीं।

ज्ञान तत्व का स्वरूप भी समझनें में आपसे कहीं भूल हुई है। ज्ञान तत्व का उद्देश्य किसी भी रूप में व्यावसायिक नहीं है। इसका स्वरूप पूरी तरह सामाजिक ह जो विचार मंथन में सक्रिय है। विचार मंथन की पक्रिया में मैं भी एक सहयोगी हूँ। मैं एक सामाजिक कार्य समझकर इस कार्य में अपनी शक्ति और समय लगाता हूँ तथा उम्मीद करता हूँ कि इस सामाजिक कार्य को मेरा नहीं, सामाजिक ही समझकर, अन्य पाठक भी अपनी शक्ति और समय लगाते हैं। मुझे पहली बार पता चला कि ताराचन्द जी मेरी पत्रिका पढ़कर और अपनी प्रतिक्रिया भेजकर मेरे उपर अहसान कर रहे हैं, सामाजिक कर्तव्य नहीं कर रहे। मैं आपको स्पष्ट कर दूँ कि मैं पत्रिका भेजकर सामाजिक कर्तव्य कर रहा हूँ आप सब पर अहसान नहीं कर रहा। शायद इसीलिये ''ताराचन्द'' जी ने अपना पचास रूप्या वार्षिक शुल्क भी कभी नहीं भेजा क्योंकि उन्होने पत्रिका को पढ़ा उसी का मुझ पर उनका बहुत अहसान है। मेरा आपसे निवेदन है कि पिछली भूलों के लिये क्षमा करें। आपने जितना अहसान किया उसकी सूची भेज दें तो मैं उसका मूल्यांकन करके उसमें से पचास रूप्या वार्षिक का घटाकर शेष का धन्यवाद पत्र भेज दूँगा। मैं पुनः स्पष्ट कर दूँ कि आप भविष्य में वैसी भूल न करें। यदि आप ज्ञान तत्व प्ढ़ना लिखना सामाजिक कार्य समझते हैं तो हम अपने सामाजिक प्रयत्न में आपका आर्थिक सहयोग लेकर आपको इस योजना में शामिल करने पर विचार कर सकते हैं अन्यथा आप अपनी अलग खिचड़ी पकाने के लिये स्वतंत्र हैं।